मालव-संस्कृति को जैनधर्म की देन

डॉ० बसन्तीलाल बंग, एम. ए., पी-एच. डी.

मालव भूमि की महत्ता, उसके समृद्ध जन-जीवन, प्राकृतिक रमणीयता, उर्वर-धरा और सौन्दर्य पूर्ण-स्थलों के कारण तो है ही; साथ ही, उसमें बसी उज्जयिनी (उज्जैन), माहिष्मति (महेश्वर), दशपुर (मन्दसौर), धारानगरी (धार), विदिशा (नाम परिवर्तन के पूर्व भेलसा), गन्धर्वपुरी (गन्धावल) ओंकारेश्वर (मान्धाता) और सांची जैसी पुरातन, ऐतिहासिक और धार्मिक नगरियों ने भी उस महत्ता को महिमामय बना दिया है। इनमें उज्जयिनी नगरी अति प्राचीन है। आज भी यह कहना असम्भव है कि उज्जैन को सर्वप्रथम किसने बसाया था। वेदों, संहिताओं, ब्राह्मण-ग्रन्थों, उपनिषदों और पुराणों में अनेकों स्थलों पर इसकी महिमा के गान गाये गये हैं। जैन और बौद्ध साहित्य में भी इसका गौरव यथावत् स्थापित है। भारत के मानवाकार मानचित्र में मालवा उसका मध्यस्थान और उज्जैन को नाभिदेश की संज्ञा दी गई है। इसीलिये आध्यात्मिकों ने इसे 'मणिपूर चक्र' के नाम से भी सम्बोधित किया है। उज्जयिनी प्रत्येक कल्प में भिन्न-भिन्न नामों से जानी जाती रही।[1] इसीलिये इसका एक नाम प्रतिकल्पा भी रहा। इसके अतिरिक्त भी इसे प्राचीन साहित्य मनीषियों ने कई नाम दिये, जो इतिहास की करवटों के साथ परिवर्तित होते रहे।[2]

इतिहास और अन्य प्रमाणों के आधार पर 'मालव-जनपद' प्राचीन 'अवन्ती देश' का समृद्ध भाग रहा है। अवन्तिका इस जनपद की प्रमुख नगरी थी और 'अवन्तिजा' इसकी प्रमुख भाषा। शासन सत्ताओं के परिवर्तन के साथ मालव जनपद की सीमा-रेखाएँ भी बदलती रही हैं। परन्तु भौगोलिक दृष्टि से इसकी सीमा निर्धारित करना सदैव ही सम्भव रहा है। मालवा और राजपूताना के मध्य अरावली की पर्वत-मालाएँ और घने जंगलों से आच्छादित भू-क्षेत्र तथा अरावली के वायव्यकोण में सिन्ध और अन्य नदियों से घिरा हुआ उपजाऊ भाग तथा दक्षिण में लाल पत्थरों की खदानों

---

१ उज्जयिनी के एक से छः कल्पों में क्रमशः स्वर्णगंगा, कुशस्थली, अवन्तिका, अमरावती, चूड़ामणि, पद्मावती नाम रहे हैं।

२ कनकशृङ्गा, कुमुदवती, विशाला, प्रतिकल्पा, भोगावती, हिरण्यावती, आदि नामों के उल्लेख भी मिलते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से नीचे की ओर का ढालू क्षेत्र उस सीमा तक चला गया है, जहाँ समतल भूमि आरम्भ होती है। पूर्व से पश्चिम तक फैली विन्ध्यमेखलाओं का विस्तार, जो दक्षिणापथ से इसे विलग करता है—मालव-जनपद की भौगोलिक सीमा रेखा का अंकन करता है।[१] इसीलिये इसे मालवा का पठार भी कहा गया है। मालवा और उज्जैन के सम्बन्ध में पाश्चात्य विद्वानों ने अनेकों संदर्भों में कई मत व्यक्त किये हैं।[२] प्राचीन मुद्राओं, शिलालेखों एवं पुरातत्त्वीय सामग्री ने तथा संस्कृत, पाली, प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य ने भी मालव महिमा और उज्जयिनी के पुरातन इतिहास पर नये सिरे से प्रकाश डाला है। पौराणिक गाथाओं तथा बौद्ध व जैन कथाओं में इसके रोचक वर्णन भरे पड़े हैं।

मालवा के प्रथम सम्राट् भरत थे—शैव और वैष्णवों के समान ही मालवा की चिकनी मिट्टी में जैनधर्म की जड़ें भी गहराई तक पहुँची हुई हैं। इसका उल्लेख जैनधर्मग्रन्थों और उनकी परम्परागत मान्यताओं में उपलब्ध होता है। मालवा की प्राचीन नगरी उज्जयिनी महर्षि सान्दीपनि का विद्यापीठ रहा है। इस विद्याकेन्द्र की प्राचीनता का बोध कराने वाली यह मान्यता जैनियों में विद्यमान है कि 'कल्प काल में सभ्य और कर्मठ जीवन व्यतीत करने की शिक्षा सर्वप्रथम अन्तिम मनु नाभिराय के पुत्र प्रथम जैन तीर्थंकर ऋषभदेव ने दी थी।[३] इसी शिक्षा का परिणाम था कि देश में नगरादि की स्थापना प्रारम्भ हुई और ऋषभदेव के पुत्र भरत के नाम से इस देश का नाम भारतवर्ष कहा जाने लगा।[४] ऋषभदेव की आज्ञानुसार इन्द्र ने भारतवर्ष में बावन देशों की रचना की थी। अवन्ती देश का नाम सुकोशल था और जिसकी राजधानी अवन्तिका थी। कालान्तर में यही उज्जयिनी के नाम से प्रख्यात हुई।[५] ऋषभदेव द्वारा इन्द्र से बावन देशों की रचना करवाने के पश्चात् अनेकों क्षत्रिय-पुत्र इनके शासक बनाये गये। परन्तु जब राजकुमार भरत ने सम्पूर्ण भारतवर्ष को एक साम्राज्य के रूप में स्थापित किया, तब सर्वप्रथम उन्होंने जो छह खण्ड पृथ्वी जीती थी, उसमें अवन्ती देश भी सम्मिलित था। इसीलिये अवन्ती के प्रथम सम्राट् चक्रवर्ती भरत ही माने गये।[६]

---

१ इम्पीरियल गेजेटियर 'इंडिया' (३४३८)

२ सर जॉन मालकम का 'सेन्ट्रल इण्डिया', पार्टीजर का 'एन्शेन्ट इण्डिया', मार्शल की 'गाइड सांची', टॉलमी का 'एन्शेन्ट इण्डिया', जूलियन का 'हुएत्सांग', केम्बेव फ्लीट का 'एपिग्राफिका इण्डिका', टर्नर का 'महावंश', फाहियान का 'भारत वर्णन', 'गेजेटियर' तथा 'इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका'—आदि में अशोक, गुप्तकाल, बौद्ध और जैन धर्म की पृष्ठभूमि, मालवा का रमणीय और समृद्ध जन-जीवन तथा उज्जयिनी की सुन्दरता एवं महत्ता पर विभिन्न दृष्टियों से विचार किया गया है।

३ संक्षिप्त जैन इतिहास (सूरत), प्रथम भाग।

४ महापुराण (अन्तिम) १५६।१५

५ जिनसेनाचार्य कृत 'महापुराण' (इन्दौर संस्करण)

६ महापुराण, पृ० १०७६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रक्षाबन्धन त्यौहार का जन्म मालवा में—जैन मान्यतानुसार रक्षाबन्धन त्यौहार का जन्म मालवा की प्रसिद्ध नगरी उज्जयिनी में माना गया है। हरिवंशपुराण और हरिषेण कथाकोष की कथा प्रसंगों के अनुसार दिगम्बर जैनाचार्य अकम्पन स्वामी का अपने संघ सहित मालवा की राजधानी उज्जयिनी में आगमन हुआ था। उस समय उज्जयिनी में श्रीधर्म नाम का न्यायप्रिय राजा राज्य करता था। उनके जिनबलि आदि मंत्रियों के द्वारा साम्प्रदायिक विद्वेष फैलाने के कारण 'रक्षाबन्धन' त्यौहार का जन्म माना गया है।[१]

मालवा पर अहिंसा धर्म का प्रभाव—अहिंसा धर्म के प्रचार और उसके गहरे प्रभाव का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हमें 'यशोधर चरित्र' में मिलता है। मालव देश के राजा यशोधर बलि-प्रथा को राजाज्ञा से सम्पूर्ण राज्य में प्रतिबन्धित कर, स्वयं दया धर्म को प्रजा सहित स्वीकार कर लेते हैं।[२] पाण्डव वीर अर्जुन की पूर्व जन्मस्थली उज्जैन ही थी। अर्जुन अपने तीन जन्म पूर्व उज्जैन की एक धर्मभीरु राजकुमारी सुमित्रा के रूप में था, जिसने एक जैन मुनि से धर्मोपदेश सुन व्रत ग्रहण किया था, परन्तु वह उसे पूर्ण भावना सहित केवल एक दिन ही ग्रहण कर पाई थी कि उसकी मृत्यु होगई। पश्चात् वह उज्जयिनी के ब्राह्मण परिवार में पुत्र रूप में जन्मी और अपने कौशल से राजमंत्री बन गई। उसके शासन से प्रजा सुखी थी। पश्चात् वृद्धावस्था में उसने तप किया और स्वर्ग में देवता बन गई। वहाँ आयु पूर्ण करने पर पाण्डवों में अर्जुन के रूप में जन्मी।[3] यह सब जैन मुनियों की तप, व्रत और साधना पद्धति अपनाने का ही प्रभाव था।

धर्मवीरों तथा रणवीरों की भूमि—जैनधर्मग्रन्थों में यह उल्लेख है कि मालवा अनेकों धर्मवीर जैन मुनियों का प्राचीन केन्द्र रहा है। अकम्पनाचार्य जैसे अनेक मुनिराज यहाँ आते रहे हैं। मगध के राजपुत्र नागकुमार के काल में भी यहाँ प्रभावशाली जैन मुनियों का बाहुल्य था। उसी समय मालवा की राजधानी उज्जयिनी में पाँच सौ उद्भट योद्धा रहते थे। जब जैन मुनियों से नागकुमार के महाप्रतापी होने की बात कही, तो वे सभी मुनियों के साथ चल पड़े। मार्ग में उन्होंने अपनी शक्ति और पराक्रम

---

१ हरिवंशपुराण—२०।१-६, हरिषेण कथाकोष (कथा क्रमांक—११)
जब मंत्रीगण मुनि हत्या को उद्यत हुए तो राजा ने उन्हें निर्वासित कर दिया, तब संघ की रक्षा हेतु 'रक्षाबन्धन' त्यौहार मनाया गया।

२ यशोधर चरित्र (१।२२) में उल्लेख है कि राजा यशोर्ह अपने जीवन के अन्तिम समय में राजपाट पुत्र यशोधर को सौंपकर स्वयं जैन मुनि हो जाते हैं। उस समय बलि-प्रथा का तीव्रतम प्रभाव था। न केवल पशु वरन् नर भी यज्ञ में होम दिये जाते थे। परन्तु जैन मुनियों की अहिंसा धर्मयुक्त शिक्षा का यशोधर पर गहरा प्रभाव पड़ा और उसने राजाज्ञा से बलि-प्रथा पर रोक लगा दी। परिणामस्वरूप उसकी प्रजा भी जैनधर्मानुयायी बन गई।

३ करकण्डुचरिउ (कारजा) १०।१८-२२ विस्तृत कथा प्रसंग हेतु देखिये :—
'उप्पण्णउ अज्जुणु होवि साइ। फलु एहउ पुत्ति विहाणे होइ॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के अद्भुत चमत्कार दिखलाये और नागकुमार की अपराजेय शक्ति, पराक्रम, और वीरता से प्रभावित हो वापस लौट आये। उस समय उज्जयिनी में जयसेन राजा राज्य करता था। उसकी पुत्री मेनकी किसी को भी अपने योग्य वर न पाकर, विवाह के लिये तत्पर नहीं थी। परन्तु नागकुमार की वीरता का परिचय पाकर, वह उससे विवाह करने को राजी होगई।[१] मालवा के शासक धर्मनिष्ठ और वीर थे। तेइसवें जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथ के तीर्थस्थल में हुए चम्पा नरेश करकण्डु के चरित्र में एक प्रकरण द्वारा उक्त कथन की पुष्टि भी होती है, जिसमें राजा अरिदमन का चरित्र वर्णन करते हुए मुनिराज बताते हैं कि—अनेकों कष्टों, बाधाओं और कठिनाइयों को सहन कर अरिदमन अपनी रानी से सकुशल आ मिला था।[२] चौबीसवें तीर्थंकर महावीर के मालव देश की प्राचीन नगरी उज्जयिनी में आकर अतिमुक्तक नामक श्मशान में ध्यानस्थ होने का उल्लेख मिलता है, जहाँ रुद्र नामक व्यक्ति द्वारा उन पर घोर उपसर्ग किया गया। महावीर अपने ध्यान में दृढ़ एवं निश्चल रहे। रुद्र का रौद्ररूप उनको विचलित नहीं कर सका। पाशविक-शक्ति आत्म-शक्ति के सम्मुख नतमस्तक होगई। रुद्र महावीर के चरणों में जा गिरा तभी से महावीर "अति वीर" कहलाए। इसी समय उज्जैन में चण्डप्रद्योत नामक राजा था। उसके पश्चात् महावीर के 'निर्वाण-दिवस' पर पालक नामक राजा सिंहासनारूढ़ हुआ।[३]

मौर्यकालीन जैन संघ का केन्द्र—चन्द्रगुप्त मौर्य के शासनकाल में मालवा का निर्ग्रन्थ-जैन संघ, श्रुतकेवली भद्रबाहु की अध्यक्षता में प्रख्यात था। स्वयं सम्राट् चन्द्रगुप्त उनके उपदेश सुनते थे और उनके मुख से बारह वर्ष के अकाल की बात सुनकर स्वयं भी दिगम्बर मुनि हो गये थे। वे निर्ग्रन्थ संघ के साथ दक्षिण भारत भी गये थे।[४] उज्जयिनी में शेष रहे निर्ग्रन्थ श्रमण, अकाल की यातनाओं से पथभ्रष्ट हो, अपना दिगम्बर वेष छिपाने की दृष्टि से एक वस्त्र खण्ड रखने लगे। जिन्हें 'अर्ध-फालक' कहा गया। अतः यह कहना अत्युक्तिपूर्ण न होगा कि निर्ग्रन्थ जैन संघ में भेद की भावना भी मालव नगरी उज्जयिनी में जन्मी। उज्जयिनी में निर्ग्रन्थ संघ का महत्त्वपूर्ण केन्द्र रहा है। चाहे उसमें भेद उत्पन्न हो गये हों।[५] जैन श्रुतों के उद्धार

---

१ णायकुमारचरिउ (कारजा), ७।३ पृष्ठ ७२-७३ पर विस्तृत कथा प्रसंग में उल्लेख है कि—बाइसवें जैन तीर्थंकर अरिष्टनेमि के तीर्थस्थल (मगध) के राजपुत्र नागकुमार महाभाग थे।

२ करकण्डुचरिउ (कारजा) ८।१-२५, पृष्ठ ७१-७८ पर करकण्डु के सम्बन्ध में पूछे गये एक प्रश्न के उत्तर में मुनिराज राजा अरिदमन की कथा विस्तार से सुनाते हैं और निरूपित करते हैं कि यह उसके पुण्य और साहस का परिणाम था कि वह अपनी रानी से आ मिला।

३ हरिवंशपुराण, पर्व ६०, श्लोक ४८८, में महावीर के एकान्त विचरण कर साधनालीन होने का उल्लेख है। उन्होंने बारह वर्ष तक साधनामय जीवन व्यतीत किया था।

४ संक्षिप्त जैन इतिहास, भाग-२, खण्ड-१, जैन शिलालेख संग्रह की भूमिका।

५ काणे कमेमोरेशन व्हाल्यूम (पूना) पृष्ठ-२२८-२३७ के अनुसार निर्ग्रन्थ संघ में दिगम्बर-श्वेताम्बर का भेद पैदा हुआ था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हेतु कलिंग सम्राट् खारवेल ने निर्ग्रन्थ श्रमणों का सम्मेलन बुलाया था, उसमें मथुरा, उज्जैन और गिरिनगर के निर्ग्रन्थ श्रमण ही विशेष रूप से आमंत्रित थे।[१]

मालवभूमि पर शकों का आधिपत्य—मालवा पर शकों के आधिपत्य का उल्लेख 'कालकाचार्य कथानक' एवं 'यशोधर चरित्र' में हुआ है। उस समय मालवा पर गर्दभिल्ल का राज्य था, जो खारवेल का वंशज था। गर्दभिल्ल दुश्चरित्र था। उसने 'खण्ड वस्त्रधारी' जैन सम्प्रदाय के कालक नामक आचार्य की रूपवती साध्वी बहन सरस्वती को अपने अन्तःपुर में बुला लिया। कालकाचार्य इस बात को सहन न कर सके और शक राजाओं को उत्तेजित कर गर्दभिल्ल पर आक्रमण करवा दिया। शकराज विजयी हुए और उनका आधिपत्य मालवा और उज्जयिनी पर हो गया। पश्चात् कालकाचार्य ने बहन सरस्वती का उद्धार किया और प्रायश्चित्त लेकर वह पुनः जैन साध्वी बन गई।[२]

मालवा पर विक्रमादित्य का अधिकार—आन्ध्रवंशीय राजा अपने निकट सम्बन्धी गर्दभिल्ल के पतन को सहन नहीं कर सके और आन्ध्रभृत्य गौतमीपुत्र शातकर्णि शकों से जूझ पड़े। इस समय शकों की राजधानी भृगुकच्छ (भड़ोंच) थी, और उज्जैन के निकट का उनका राज्य विस्तार था।[३] वे शक्तिशाली थे। शातकर्णि पराजित हुए, परन्तु उन्होंने कुटिल बुद्धि से काम लिया। उन्होंने नरवाहन का कोष धार्मिक कार्यों में व्यय करवा कर, खाली कर दिया और पुनः आक्रमण कर उसे पराजित किया। तब मालवा और उसकी राजधानी उज्जयिनी मुक्त हुई।[४] जैन-साहित्य विक्रमादित्य की विजय एवं पराक्रमी गाथाओं से भरा पड़ा है। वह जैनधर्म के प्रति सहिष्णु था और जैनों ने शक विजय पर प्रारम्भ विक्रम सम्वत् अपनाया था। कई कथानक इस कथन की पुष्टि करते हैं कि विक्रमादित्य स्वयं जैनधर्म के उपदेशक थे। इससे यह प्रमाणित होता है कि विश्व विख्यात सम्राट विक्रम का जैनधर्म के प्रति कितना लगाव था।[५]

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य और जैनाचार्यों का केन्द्र—चन्द्रगुप्त (द्वितीय) विक्रमादित्य गुप्त साम्राज्य का प्रतापी राजा था। उसने मालव विजय कर उज्जयिनी को अपने अन्तर्गत ले लिया। उसकी राजसभा में क्षपणक (दिगम्बर जैनाचार्य) को सम्मान प्राप्त था। जैन शास्त्रों के अनुसार वे सिद्धसेन नामक आचार्य थे, जिन्होंने महाकाली

---

१ जर्नल ऑफ दि विहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी, भाग-१३, पृ० २३६।

२ कालकाचार्य कथानक—प्रभावक चरित्र (बम्बई), पृष्ठ ३६-४६

३ शातकर्णि के समय नरवाहन (नहवाण या नहपान) वहाँ का शक राजा था।

४ स्व० काशीप्रसाद जायसवाल ने गौतमीपुत्र शातकर्णि को उज्जैन में आकर बसने और वहाँ का राजा बनने का उल्लेख किया है। यही शातकर्णि विक्रमादित्य के नाम से प्रख्यात हुए। (देखिये—जर्नल ऑफ दि बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी, भाग १६)

५ संक्षिप्त जैन इतिहास (सूरत) भाग-२, खण्ड २, पृष्ठ ६६, पार्श्वनाथ चरित्र (भवदेवसूरिकृत) सर्ग ३ व जैन सेवियर पार्श्वनाथ (बाल्टिमोर यू० एस० ए०) ७४-८३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के मन्दिर में चन्द्रगुप्त को चमत्कृत कर, जैनधर्म में दीक्षित कर लिया था। इसी समय दिगम्बर जैन मुनियों का संघ भद्दलपुर (बीसनगर) से उज्जैन में स्थानान्तरित हुआ था।[1] पश्चात् उज्जैन दिगम्बर जैन भट्टारकों की केन्द्रीय नगरी भी बनी और यहाँ पच्चीस जैन दिगम्बराचार्य चार सौ उन्तीस वर्ष की अवधि में प्रख्यात हुए।[2]

परमार वंशीय राजाओं द्वारा जैनाचार्यों का सम्मान—परमारवंशीय राजाओं की राजधानी धारा नगरी (धार) थी परन्तु राजा भोज ने उज्जयिनी को अपनी राजधानी बनाया था। इस वंश के कई राजा विद्या, कला और साहित्य के ज्ञाता और रसिक थे। उन्होंने अनेकों जैनाचार्यों को राजकीय सम्मान और प्रतिष्ठा प्रदान की थी।[3] मुंज के समान भोज ने भी जैनधर्म और आचार्यों को सर्वाधिक सम्मान दिया। श्री प्रभाचन्द्राचार्य को विशेष रूप से सम्मानित किया। दिगम्बराचार्य श्री शान्तिसेन ने भोज के दरबार में कई विद्वानों एवं पण्डितों को वाद-विवाद में पराजित किया था। एक अन्य आचार्य विशालकीर्ति के शिष्य मदनकीर्ति ने उज्जयिनी में अन्य वादियों को परास्त कर 'महा प्रामाणिक' की पदवी प्राप्त की थी। इस प्रकार मध्ययुग तक जैनधर्म का प्राबल्य मालवा में और विशेषकर उज्जयिनी में रहा।[4]

उज्जैन नगर की प्राचीन वैभवसम्पन्नता कालचक्र के थपेड़ों और मध्यकाल से अंग्रेजी शासन तक के राजनैतिक परिवर्तनों की चपेट में आज धूलि-धूसरित भले ही होगई हो, परन्तु इसके भग्नावशेषों से आज भी इसके गौरवशाली अतीत की वे गाथाएँ, जिनमें इसके उत्तुंग राजप्रासाद, विशाल-पथ, रम्य और सुन्दर जिन मन्दिर, आकर्षक उद्यान, विश्व का व्यापारिक केन्द्र, अपार धन-सम्पदा, स्वर्ग की परी के समान शस्य-श्यामला-धरा, मरकत मणियों से जड़े नगर पथ, चन्द्रकान्त मणियों से आभासित आवास, रत्नजड़ित क्यारियों से बहने वाली सुरभित सुमनों की मदमस्त सौरभ, पर-सुखापेक्षी नगरवासी, सुशील व पतिभक्ता रमणियाँ, ऐसी-नयनप्रिय नगरी, जो सूर्य रश्मियों को भी लज्जित करदे—अनुगुंजित हो रही है।[5] उज्जयिनी का प्राचीन

---

१ संक्षिप्त जैन इतिहास (सूरत) तथा रत्नकरण्ड श्रावकाचार—भूमिका—जीवन चरित्र (पृष्ठ १३३।१४१)

२ जैन हितैषी, भाग ६, अंक ७-८, पृष्ठ २८-३१

३ राजा मुंज ने धनपाल, पद्मगुप्त व धनञ्जय जैसे विद्वानों को दरबार में सम्मानित किया। जैनाचार्य महासेन उनका स्नेह और आदर पा चुके थे। धनपाल के भाई शोभन भी जैनधर्म में दीक्षित हुए, परन्तु धनपाल उज्जैन में जैनधर्म का गहन प्रभाव देखकर धारा चले गये। शोभन फिर भी पूर्णरूपेण प्रभावित रहे। आचार्य अमितगति इस समय के प्रख्यात जैन यतियों में से एक थे।

४ भारत के प्राचीन राजवंश, मध्यप्रान्तीय जैन स्मारक, हिन्दी विश्वकोष और विद्वद्रत्नमाला, चतुर्विंशति प्रबन्ध, जैन हितैषी, देखिये।

५ हरिषेण कथाकोष (कथा क्रमांक ३), महाकवि पुष्पदन्त कृत 'यशोधर चरित्र', कनकामरकृत 'करकण्डुचरिउ', आदि में उज्जयिनी का विशद् वर्णन है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विद्यापीठ महर्षि सान्दीपनि की कुटिया में 'कृष्ण-सुदामा' की पवित्र मित्रता का स्मरण कराता है। राजकुमार चन्द्रप्रभ और उनके गुरु कालसंदीय क्रमशः सत्रह एवं अठारह भाषाओं के ज्ञाता थे। वे धनुर्विद्या में निपुण और महावीर स्वामी के निकट जैन मुनि हो गये थे।[1] वैसे उज्जयिनी नगरी संसार प्रसिद्ध रही है। उसने विभिन्न कालों में भिन्न-भिन्न धर्म-धाराओं को आत्म-सात् कर न केवल मालवा की यशोगाथा वरन् भारत की कीर्तिपताका को विश्व-आकाश में फहराया है।

दक्षिण भारतीय जैन साहित्य में उज्जयिनी का यशोगान—तमिल साहित्य के दो महाकव्यों में "शीलप्पदिकारम्" की रचना एक जैनधर्मावलम्बी राजकुमार ने की थी। इसके छठे परिच्छेद में उज्जयिनी का वैचित्र्यपूर्ण उल्लेख है। जिससे ज्ञात होता है कि एक समय था, जब उज्जयिनी नगरी उत्तर भारत की प्रमुख नगरी थी। अवन्ती नरेश ने चोलराज का स्वागत मणिमुक्ताओं से जड़े हुए तोरण द्वार बनवाकर किया था, जिसकी बनावट देखते ही बनती थी।[2]

जैन शिलालेखों में मालवा और उज्जयिनी—श्रवण बेलगोला (मैसूर) के चन्द्रगिरि पर्वत पर शक संवत् ५२२ के एक शिलालेख में आचार्य भद्रबाहु को उज्जयिनी में अवस्थित बताया है। उन्हें अष्टांग महानिमित्त के ज्ञाता और त्रिकालदर्शी कहा गया है। उन्हीं ने १२ वर्ष के अकाल पड़ने की घोषणा की थी।[3] सन् ११२२ के एक सिद्धेश्वर मन्दिर (कल्लूर गुडेड) के शिलालेख में आचार्य सिंहनन्दी का वर्णन है। इसमें उल्लेख है कि उज्जैन के राजा महीपाल ने इक्ष्वाकु नरेश पद्मनाभ को पराजित किया था। इस कारण उनके दो पुत्र दक्षिण भारत चले गये और आचार्य सिंहनन्दी की सहायता से वहाँ उन्होंने 'गंग राज्य' की स्थापना की।[4]

गुणाढ्य की 'वड्डकहा', मेरुतुंगाचार्य की 'प्रबन्धचिन्तामणि', बौद्ध जातक तथा जैन पुराणों में समाहित अनेकों कथानकों में मालव प्रदेश और उज्जजिनी नगरी के जैन मतावलम्बी श्रेष्ठि समाज की कथा गाथाओं और वैभव सम्पन्नता का उल्लेख मिलता है। इसके अतिरिक्त मालवा और उसकी प्राचीन नगरियों से सम्बन्धित सामग्री का संकलन, सम्पादन, प्रकाशन और युक्तियुक्त विश्लेषण की अपेक्षा रखता है, जिससे कि अतीत के गर्भ में विस्मृत मालव संस्कृति पुनः प्रकाश में आ सके।

मालवा विविध धर्म-सम्प्रदायों का प्रवर्तन केन्द्र भी रहा है। परन्तु जैनधर्म की दृष्टि से मालव भूमि की उर्वरा शक्ति उतनी ही प्रबल रही, जितनी अन्यान्य धर्मों और धार्मिक विचारधाराओं के लिये। कालचक्र का अनवरत् प्रवाह इस धरती को भी स्पर्श करता रहा है और अपने अमिट चिन्ह छोड़ता रहा है, जिनके अवशेष

---

१ हरिषेण कथाकोष (श्री भद्रबाहु की कथा देखिये)
२ "दि शीलप्पदिकारम्" (आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस) पृष्ठ १२२-१२३
३ जैन शिलालेख संग्रह, पृष्ठ २
४ सेल्फेयर : 'मिडिवल जैनिज्म'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आज भी अपनी गौरव-गाथा गुंजा रहे हैं। आज का उज्जैन नगर अपने अतीत की गौरवशाली परम्परा का प्राणवान प्रतिनिधित्व भले ही न करे, परन्तु मालवा की मिट्टी का कण-कण और उज्जयिनी स्थित क्षिप्रा की लोल-लहरियाँ अपनी मन्द-मन्थर गति से ज्ञान, दर्शन, तप, चारित्र और मोक्ष की मानव-पिपासा को परितृप्त करने में पूर्णरूपेण सक्षम हैं।[१]

---

१ प्रस्तुत लेख में मध्यप्रदेश शासन के सूचना तथा प्रकाशन संचालनालय द्वारा प्रकाशित "उज्जयिनी दर्शन" नामक परिचय पुस्तक में प्रकाशित श्री कामताप्रसाद जैन के लेख के अतिरिक्त अन्य सामग्री से भी सहायता ली गई है।

विशेष—गुप्तवंशीय सम्राटों के सम्बन्ध में लेखक की धारणाएँ प्रचलित ऐतिहासिक धारणाओं से कुछ भिन्न प्रतीत होती हैं, साथ ही ऐतिहासिक आचार्यों के सम्बन्ध में भी मत-भिन्नता है।
—सम्पादक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org